

मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड के सुदामडीह कोलियरी के प्रबंधन से संबंधित नियोक्ता।

बनाम

उनके कामगार, जिनका प्रतिनिधित्व राष्ट्रीय कोलियरी मजदूर संघ द्वारा किया जा रहा है

जनवरी 16, 2006

[अरिजीत पासायत एवं तरुण चटर्जी, न्यायमूर्तिगण]

*श्रम कानून:*

*संविदा श्रमिक-का समायोजन-अधीनस्थ न्यायालयों ने उन्हें मुख्य नियोक्ता-प्रबंधन के कर्मचारी माना- अपील पर, स्टील अथॉरिटी के मामले में संविधान पीठ के निर्णय के मद्देनजर मामले को नए सिरे से विचार करने के लिए उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया गया क्योंकि जब उच्च न्यायालय ने इस मुद्दे पर निर्णय सुनाया, तब एयर इंडिया का मामला प्रभावी था- इसके अलावा, यह मुद्दा कि क्या ठेकेदार एक छद्म था, दायर संदर्भ में श्रमिकों के नामों को छोड़ दिया गया और प्रबंधन और श्रमिकों के बीच कथित समझौते पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया गया- औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947-धारा 10।*

कोयला कंपनी के प्रबंधन ने अपने कर्मचारियों को रोजगार देने से इनकार कर दिया। विवादों को औद्योगिक न्यायाधिकरण के पास प्रतिप्रेषित किया गया। न्यायाधिकरण ने उन्हें मुख्य नियोक्ता-कोयला कंपनी का कर्मचारी माना। एकल न्यायाधीश और उच्च न्यायालय की खंडपीठ, दोनों ने इस आदेश को बरकरार रखा। उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने \*एयर इंडिया वैधानिक निगम आदि बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन व अन्य के मामले पर अवलंबन करते हुए कहा कि जहाँ किसी ठेकेदार द्वारा कर्मचारियों की नियुक्ति मुख्य नियोक्ता और कर्मचारियों के बीच वास्तविक संबंध को छिपाने का एक बहाना है, वहाँ बिना अनुज्ञप्ति वाले ठेकेदार के माध्यम से

नियोजित कर्मचारियों को भी मुख्य नियोक्ता का कर्मचारी माना जाना चाहिए। इसलिए वर्तमान अपील प्रस्तुत की गई।

अपीलकर्ता-प्रबंधन ने तर्क दिया कि *स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड एवं अन्य बनाम नेशनल यूनियन वाटरफ्रंट वर्कर्स एवं अन्य* मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ के निर्णय के मद्देनजर कि संविदा श्रम (विनियमन एवं उन्मूलन) अधिनियम, 1970 की धारा 10(1) के तहत संविदा श्रमिकों के नियोजन पर रोक लगाने वाली अधिसूचना जारी करने से मुख्य नियोक्ता द्वारा संविदा श्रमिकों के स्वतः अवशोषण की अवधारणा का तात्पर्य नहीं है, उच्च न्यायालय का आदेश कायम नहीं रखा जा सकता; यह विवाद लगभग एक दशक बाद उठाया गया था; प्रबंधन और श्रमिकों के बीच समझौता हो गया था; और संदर्भ में श्रमिकों के नाम नहीं दिए गए थे, इस प्रकार, श्रमिक किसी भी राहत के हकदार नहीं थे।

अपीलों को स्वीकार करते हुए और मामले को उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1. न्यायाधिकरण और उच्च न्यायालय ने विधिक स्थिति की पृष्ठभूमि में तथ्यात्मक स्थिति पर विचार नहीं किया। जिस समय मामले का निर्णय हुआ, उस समय \*एयर इंडिया वैधानिक निगम आदि बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन एवं अन्य मामला ही मान्य था। लेकिन \*\**स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड एवं अन्य बनाम नेशनल यूनियन वाटरफ्रंट वर्कर्स एवं अन्य* मामले में संविधान पीठ के निर्णय के मद्देनजर, इस मामले की उच्च न्यायालय द्वारा पुनः जाँच आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, न्यायाधिकरण और/या उच्च न्यायालय द्वारा कोई निश्चित निष्कर्ष नहीं निकाला गया कि अपीलकर्ता ने छद्मवेश धारण किया था। इस न्यायालय की कुछ टिप्पणियों का मात्र उल्लेख पर्याप्त नहीं होगा। इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने उन दावेदारों के नामों को छोड़ने के प्रभाव पर, जिनका पक्ष संघ द्वारा उचित

परिप्रेक्ष्य में रखा जा रहा था, विचार नहीं किया और न ही कथित समझौते की स्थिति पर विचार किया। इन परिस्थितियों में, मामले को आवंटन की तिथि से छह महीने की अवधि के भीतर नए सिरे से विचार करने के लिए उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया जाता है। [399-सी-जी]

\* एयर इंडिया वैधानिक निगम आदि बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन एवं अन्य, एआईआर (1997) एससी 645; सचिव हरियाणा राज्य विद्युत बोर्ड बनाम सुरेश एवं अन्य आदि जेटी [1999] 2 एससीसी 435; \*\*स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लि. एवं अन्य बनाम नेशनल यूनियन वाटरफ्रंट वर्कर्स एवं अन्य [2001] 7 एससीसी 1; नितिनकुमार नाथलाल जोशी एवं अन्य बनाम ऑयल एंड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लि. एवं अन्य [2002] 3 एससीसी 433; नेदुंगडी बैंक लि. बनाम के.पी. माधवनकुट्टी एवं अन्य [2000] 2 एससीसी 455 और एसएम नीलाजकर एवं अन्य बनाम दूरसंचार जिला प्रबंधक, कर्नाटक, [2003] 4 एससीसी 27, संदर्भित।

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 2000 की दीवानी अपील संख्या 1902-1903।

एल.पी.ए. संख्या 424 एवं 425/98 (आर) में पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 17.5.99 के निर्णय एवं आदेश से।

अपीलकर्ताओं की ओर से अजीत कुमार सिन्हा।

उत्तरदाताओं की ओर से एस.बी. उपाध्याय, सुश्री के.एल. दास एवं शिव मंगल शर्मा।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

अरिजीत पासायत, न्यायमूर्ति अपीलकर्ता ने पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय को बरकरार रखते हुए दिए गए निर्णय की वैधता पर सवाल उठाया है। उक्त निर्णयों में कुछ व्यक्तियों को अपीलकर्ता का कर्मचारी माना गया था।

संक्षेप में तथ्यात्मक पृष्ठभूमि इस प्रकार है:

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 10 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए, केंद्र सरकार ने निम्नलिखित दो विवादों को केंद्रीय सरकार औद्योगिक न्यायाधिकरण संख्या 1, धनबाद (जिसे आगे 'न्यायाधिकरण' कहा जाएगा) को न्यायनिर्णयन के लिए प्रतिप्रेषित किया है:

*1989 का संदर्भ संख्या 32 दिनांक 16 मार्च, 1989:*

1. "क्या मेसर्स सुदामडीह कोलियरी के प्रबंधन द्वारा श्री कर्मा राउत और 21 अन्य को 9.7.1977 से रोजगार देने से इनकार करना उचित है? यदि नहीं, तो संबंधित श्रमिक किस राहत के हकदार हैं" और

*1989 का संदर्भ संख्या 35 दिनांक 20 मार्च, 1989:*

2. "क्या मेसर्स बीसीसीएल के सुदामडीह क्षेत्र के प्रबंधन द्वारा श्री भागवत सिंह और तीन अन्य लोगों अर्थात् श्री सपन, करण साही और शांति ठाकुर, जो नाबदान सफाई मजदूरों के रूप में कार्यरत थे, को रोजगार देने से इनकार करना उचित है? यदि नहीं, तो श्रमिक किस राहत के हकदार हैं?"

चूँकि दोनों मामलों में विवाद एक ही था, इसलिए न्यायाधिकरण ने उनकी सुनवाई समान रूप से की और कामगारों के पक्ष में संदर्भों का उत्तर देते हुए उन्हें मुख्य नियोक्ता, अर्थात् मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड के प्रबंधन (जिसे आगे 'प्रबंधन' कहा जाएगा) का कामगार घोषित किया और उन्हें संदर्भ की तिथि से 75% बकाया वेतन के साथ सेवा में बहाल करने का निर्देश दिया। उक्त संयुक्त पंचाट से व्यथित होकर, प्रबंधन ने पटना उच्च न्यायालय के समक्ष दो रिट याचिकाएं दायर कीं, सीडब्ल्यूजेसी संख्या 859/1993 (आर) और सीडब्ल्यूजेसी संख्या 856/1993 (आर), जिन्हें विद्वान एकल न्यायाधीश ने 10 अगस्त, 1998 को खारिज कर दिया।

विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय से संतुष्ट नहीं होने पर, प्रबंधन ने लेटर्स पेटेंट के खंड 10 के तहत दो अपील दायर की हैं।

एयर इंडिया वैधानिक निगम आदि बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन एवं अन्य, एआईआर (1997) एससी 645 में इस न्यायालय के निर्णय पर अवलंबन करते हुए खंडपीठ ने माना कि विद्वान एकल न्यायाधीश का निर्णय अपवादहीन था। सचिव हरियाणा राज्य विद्युत बोर्ड बनाम सुरेश एवं अन्य आदि जे.टी. [1999] 2 एस.सी.सी. 435 में इस न्यायालय के निर्णय का भी संदर्भ दिया गया, जिसमें कहा गया था कि जहां ठेकेदार द्वारा कामगारों की नियुक्ति मुख्य नियोक्ता और कामगारों के बीच वास्तविक संबंध को छिपाने के लिए एक छलावरण है, वहां भी बिना अनुज्ञप्ति वाले ठेकेदार के माध्यम से नियोजित कामगारों को मुख्य नियोक्ता के कामगार माना जाएगा।

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री अजीत कुमार सिन्हा ने तर्क दिया कि विद्वान एकल न्यायाधीश और खंडपीठ द्वारा व्यक्त किए गए विचार को *स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड एवं अन्य बनाम नेशनल यूनियन वाटरफ्रंट वर्कर्स एवं अन्य*, [2001] 7 एससीसी 1 में इस न्यायालय के संविधान पीठ के निर्णय के मद्देनजर बरकरार नहीं रखा जा सकता है। यह बताया गया कि यद्यपि कथित रूप से 1976-77 की अवधि से संबंधित विवाद काफी समय बाद यानी लगभग एक दशक बाद उठाया गया था और केवल इसी आधार पर दावेदार किसी भी राहत के हकदार नहीं थे। एक समझौता हुआ जो बाध्यकारी था। लेकिन न्यायाधिकरण और उच्च न्यायालय ने इस पर ध्यान नहीं दिया। इसके अतिरिक्त, संदर्भ में मजदूरों के नाम नहीं दिए गए थे और यह स्पष्ट नहीं था कि संघ किसका पक्ष ले रहा था। संघ द्वारा न्यायाधिकरण के समक्ष प्रस्तुत किए गए बयान में पहली बार नामों का उल्लेख किया गया था। इसलिए, संदर्भ अक्षम था, लेकिन न्यायाधिकरण ने इसे हल्के में लिया।

दूसरी ओर, उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता श्री एस.बी. उपाध्याय ने तर्क दिया कि *स्टील अथॉरिटी* के मामले (उपरोक्त) का निर्णय वर्तमान मामले पर भी लागू होता है क्योंकि तथाकथित ठेकेदार को छद्म रूप में पेश किया गया था। न्यायाधिकरण ने इस पहलू पर ध्यान दिया है। इसके अतिरिक्त, उत्तरदाता निष्क्रिय नहीं थे और वे मामले को निपटाने के लिए हर संभव प्रयास कर रहे थे। केवल नाम न दिए जाने से संदर्भ अक्षम नहीं हो जाता। इसके अलावा, जिस समझौते का उल्लेख किया गया था, उसे कोई कानूनी स्वीकृति नहीं थी।

प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों की सराहना करने के लिए विभिन्न मामलों में इस न्यायालय की टिप्पणियों पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

स्टील अथॉरिटी के मामले (उपरोक्त) में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह टिप्पणी की गई थी (कंडिका 125 पर):

"125 - उपरोक्त चर्चा के परिणाम को इस प्रकार रेखांकित किया गया है:

(1) (ए) 28-1-1986 से पहले, इस प्रश्न का निर्धारण कि किसी प्रतिष्ठान के संबंध में केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार समुचित सरकार है, सी.एल.आर.ए. अधिनियम में यथा उल्लिखित "समुचित सरकार" की परिभाषा के मद्देनजर, एक अन्य प्रश्न के उत्तर पर निर्भर करेगा कि क्या विचाराधीन उद्योग केन्द्रीय सरकार द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन चलाया जा रहा है या क्या यह किसी विनिर्दिष्ट नियंत्रित उद्योग से संबंधित है, या किसी रेलवे छावनी बोर्ड, प्रमुख बंदरगाह, खान या तेल क्षेत्र की स्थापना से संबंधित है या बैंकिंग या बीमा कंपनी की स्थापना से संबंधित है? यदि उत्तर सकारात्मक है तो केन्द्रीय सरकार समुचित सरकार होगी; अन्यथा किसी अन्य प्रतिष्ठान के संबंध में उस राज्य की सरकार, जिसमें प्रतिष्ठान स्थित है, समुचित सरकार होगी;

(बी) उक्त तिथि के पश्चात, उस अभिव्यक्ति की नई परिभाषा के मद्देनजर, ऊपर संदर्भित प्रश्न का उत्तर औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 2 के खंड (ए) में खोजना होगा; यदि (i) संबंधित केंद्रीय सरकार की कंपनी/उपक्रम या संबंधित कोई उपक्रम उसमें नामिती के रूप में शामिल है, या (ii) कोई उद्योग (ए) केंद्रीय सरकार के प्राधिकार द्वारा या उसके अधीन, या (बी) किसी रेलवे कंपनी द्वारा; या (सी) किसी निर्दिष्ट नियंत्रित उद्योग द्वारा चलाया जाता है, तो केंद्रीय सरकार समुचित सरकार होगी; अन्यथा किसी अन्य प्रतिष्ठान के संबंध में, उस राज्य की सरकार जिसमें वह अन्य प्रतिष्ठान स्थित है, समुचित सरकार होगी।

(2) (ए) किसी भी प्रतिष्ठान में किसी भी प्रक्रिया, संचालन या अन्य कार्य में संविदा श्रमिकों के नियोजन पर रोक लगाने के लिए सीएलआरए अधिनियम की धारा 10(1) के तहत अधिसूचना उपयुक्त सरकार द्वारा जारी की जानी चाहिए:

(1) केंद्रीय सलाहकार बोर्ड या राज्य सलाहकार बोर्ड, जैसा भी मामला हो, के साथ परामर्श करने के बाद, और

(2) के संबंध में

(i) संबंधित प्रतिष्ठान में संविदा श्रमिकों के लिए प्रदान की गई कार्य की शर्तें और लाभ, और

(ii) धारा 10 की उपधारा (2) में उल्लिखित सहित अन्य प्रासंगिक कारक;

(बी) चूंकि केन्द्र सरकार द्वारा 9-12-1976 को जारी की गई अधिसूचना धारा 10 की पूर्वोक्त अपेक्षाओं को पूरा नहीं करती है, इसलिए इसे अभिखंडित किया जाता है, लेकिन हम ऐसा भविष्य में अर्थात् इस निर्णय की तिथि से करते हैं और इस स्पष्टीकरण के अधीन करते हैं कि इस निर्णय के आधार पर इस निर्णय की तिथि को या उससे पहले

उक्त अधिसूचना को प्रभावी करने के लिए पारित कोई आदेश या की गई कोई कार्रवाई किसी न्यायाधिकरण या उच्च न्यायालय सहित न्यायालय में प्रश्नगत नहीं की जाएगी, यदि वह अन्यथा अंतिम हो गई है और/या उसे क्रियान्वित किया गया है।

(3) सीएलआरए अधिनियम की धारा 10 या अधिनियम का कोई अन्य प्रावधान, चाहे स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ से, धारा 10 की उपधारा (1) के अंतर्गत उपयुक्त सरकार द्वारा किसी भी प्रतिष्ठान में किसी भी प्रक्रिया, संचालन या अन्य कार्य में संविदा श्रमिकों के नियोजन पर प्रतिबंध लगाने वाली अधिसूचना जारी करने पर संविदा श्रमिकों के स्वतः आमेलन का प्रावधान नहीं करता है। परिणामस्वरूप, प्रधान नियोक्ता को संबंधित प्रतिष्ठान में कार्यरत संविदा श्रमिकों के आमेलन का आदेश देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है।

(4) हम एयर इंडिया मामले (*एयर इंडिया वैधानिक निगम बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन*, [1997] 9 एससीसी 377) में इस न्यायालय के निर्णय को खारिज करते हैं और घोषणा करते हैं कि एयर इंडिया मामले (*एयर इंडिया वैधानिक निगम बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन*, [1997] 9 एससीसी 377) में निर्णय के बाद अनुबंध श्रम के अवशोषण के लिए उच्च न्यायालय सहित किसी भी औद्योगिक निर्णायक / किसी भी न्यायालय द्वारा जारी किया गया कोई भी निर्देश अच्छा रहेगा और इसे इस निर्णय के आधार पर अलग नहीं किया जाएगा, बदला नहीं जाएगा या संशोधित नहीं किया जाएगा, उन मामलों में जहां इस तरह के निर्देश को प्रभावी किया गया है और यह अंतिम हो गया है।

(5) सीएलआरए अधिनियम की धारा 10(1) के अंतर्गत संविदा श्रमिकों के नियोजन या अन्यथा पर प्रतिषेध अधिसूचना जारी होने पर, किसी संविदा श्रमिक द्वारा सेवा की शर्तों

के संबंध में उसके समक्ष लाए गए औद्योगिक विवाद में, औद्योगिक निर्णायक को इस प्रश्न पर विचार करना होगा कि क्या ठेकेदार को या तो इस आधार पर हस्तक्षेप किया गया है कि उसने प्रतिष्ठान के लिए कोई निश्चित परिणाम देने का या किसी वास्तविक अनुबंध के तहत प्रतिष्ठान के कार्य हेतु संविदा श्रमिकों की आपूर्ति का कार्य किया है या यह विभिन्न लाभकारी कानूनों के अनुपालन से बचने के लिए मात्र एक छल/छलावरण है ताकि श्रमिकों को उसके अंतर्गत मिलने वाले लाभ से वंचित किया जा सके। यदि यह पाया जाता है कि अनुबंध वास्तविक नहीं है, बल्कि केवल एक छलावरण है, तो तथाकथित संविदा श्रमिक को मुख्य नियोक्ता के कर्मचारी माना जाएगा, जिसे संबंधित प्रतिष्ठान में संविदा श्रमिकों की सेवाओं को नियमित करने का निर्देश दिया जाएगा, बशर्ते कि वह नीचे दिए गए कंडिका 6 के आलोक में इस प्रयोजन के लिए निर्दिष्ट शर्तों के अधीन हो।

(6) यदि अनुबंध वास्तविक पाया जाता है और संबंधित प्रतिष्ठान के संबंध में सीएलआरए अधिनियम की धारा 10(1) के तहत निषेध अधिसूचना उपयुक्त सरकार द्वारा जारी की गई है, जो किसी भी प्रतिष्ठान की किसी भी प्रक्रिया, संचालन या अन्य कार्य में संविदा श्रमिकों के रोजगार को प्रतिबंधित करती है और जहां प्रतिष्ठान की ऐसी प्रक्रिया, संचालन या अन्य कार्य में प्रधान नियोक्ता नियमित श्रमिकों को नियोजित करने का इरादा रखता है, तो वह पूर्ववर्ती संविदा श्रमिकों को वरीयता देगा, यदि अन्यथा उपयुक्त पाया जाता है और यदि आवश्यक हो, तो ठेकेदार द्वारा उनके प्रारंभिक रोजगार के समय श्रमिकों की आयु को ध्यान में रखते हुए, अधिकतम आयु संबंधी शर्त को उचित रूप से शिथिल करके और तकनीकी योग्यताओं के अलावा शैक्षणिक योग्यताओं के संबंध में शर्त को भी शिथिल करके।

बाद के एक *नितिनकुमार नाथालाल जोशी एवं अन्य बनाम तेल एवं प्राकृतिक गैस निगम लिमिटेड एवं अन्य*, [2002] 3 एससीसी 433) मामले में, कंडिका 8 में निम्नलिखित उल्लेख किया गया था:

"8-वर्तमान मामले में, अपीलकर्ताओं को मुख्य नियोक्ता द्वारा समाहित नहीं किया गया था। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता कि *स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड* मामले [2001] 7 एससीसी 1 में दिए गए निर्णय को लागू नहीं किया जा सकता। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा जारी निर्देशों को उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा संशोधित किया गया था और उन्हें कभी लागू नहीं किया गया। इसलिए, *स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड* मामले [2001] 7 एससीसी 1 में इस न्यायालय द्वारा जारी निर्देश सभी पक्षों पर लागू होते हैं।"

जहाँ तक संदर्भ प्राप्त करने में देरी का सवाल है, सार्वभौमिक रूप से लागू होने का कोई सूत्र निर्धारित नहीं किया जा सकता। यह प्रत्येक व्यक्तिगत मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा।

हालाँकि, इस न्यायालय द्वारा की गई कुछ टिप्पणियों पर ध्यान देना आवश्यक है। *नेदुंगडी बैंक लिमिटेड बनाम के.पी. माधवनकुट्टी एवं अन्य* [2000] 2 एससीसी 455 मामले में कंडिका 6 में निम्नलिखित उल्लेख किया गया था:

"6. अधिनियम की धारा 10 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए कानून उपयुक्त सरकार के लिए कोई समय-सीमा निर्धारित नहीं करता है। ऐसा नहीं है कि इस शक्ति का प्रयोग किसी भी समय किया जा सकता है और उन मामलों को पुनर्जीवित करने के लिए किया जा सकता है जो तब से सुलझ चुके हैं। शक्ति का प्रयोग यथोचित और तर्कसंगत तरीके से किया जाना चाहिए। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि उत्तरदाता को सेवा से बर्खास्त करने के आदेश के लगभग सात वर्ष बीत जाने के बाद, इस मामले में

केंद्र सरकार द्वारा शक्तियों का प्रयोग करने का कोई तर्कसंगत आधार नहीं है। जिस समय संदर्भ दिया गया था, उस समय कोई औद्योगिक विवाद अस्तित्व में नहीं था या यहाँ तक कि यह भी कहा जा सकता था कि कोई औद्योगिक विवाद उत्पन्न हुआ था। कोई विवाद जो पुराना हो चुका है, अधिनियम की धारा 10 के अंतर्गत संदर्भ का विषय नहीं हो सकता। किसी विवाद को कब पुराना कहा जा सकता है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। जब मामला अंतिम हो गया है, तो हमें यह असंगत प्रतीत होता है कि वर्तमान परिस्थितियों में अधिनियम की धारा 10 के अंतर्गत संदर्भ दिया जाए। वास्तव में यह कहा जा सकता है कि जिस समय यह संदर्भ दिया गया था, उस समय कोई विवाद लंबित नहीं था। उत्तरदाता द्वारा दिया गया एकमात्र आधार यह था कि सेवा से बर्खास्त किए गए दो अन्य कर्मचारियों को बहाल कर दिया गया था। किन परिस्थितियों में उन्हें बर्खास्त किया गया और बाद में बहाल किया गया, इसका कहीं उल्लेख नहीं है। उत्तरदाता द्वारा औद्योगिक विवाद उठाने की मांग स्पष्ट रूप से गलत और अक्षम थी।

*एस.एम. नीलाजकर एवं अन्य बनाम दूरसंचार जिला प्रबंधक, कर्नाटक, [2003] 4*

एससीसी 27 में स्थिति को इस प्रकार दोहराया गया था: (कंडिका 17 पर)

“17. उत्तरदाता की ओर से यह दलील दी गई कि अपीलकर्ताओं द्वारा विवाद उठाने में हुई देरी के कारण उच्च न्यायालय द्वारा अपीलकर्ताओं को राहत देने से इनकार करना उचित था। हम इससे सहमत नहीं हो सकते। यह सच है, जैसा कि *मेसर्स शालीमार वर्क्स लिमिटेड बनाम उनके कामगार* (उपरोक्त) एआईआर (1959) एससी 1217 में कहा गया है, कि सिर्फ इसलिए कि औद्योगिक विवाद अधिनियम विवाद उठाने की कोई सीमा निर्धारित नहीं करता, इसका मतलब यह नहीं है कि विवाद किसी भी समय और देरी और उसके

कारणों की परवाह किए बिना उठाया जा सकता है। औद्योगिक न्यायाधिकरण को विवादों को संदर्भित करने के लिए कोई सीमा निर्धारित नहीं है, फिर भी यह उचित ही है कि विवादों को उनके उठने के बाद और सुलह की कार्यवाही विफल होने के बाद यथाशीघ्र संदर्भित किया जाना चाहिए, विशेष रूप से तब, जब विवाद श्रमिकों की पूर्ण बर्खास्तगी से संबंधित हो। *मेसर्स शालीमार वर्क्स लिमिटेड बनाम उनके कामगार* (उपरोक्त) एआईआर (1959) एससी 1217 में अधिकांश पुराने कामगारों की पुनः नियुक्ति के बाद भी विवाद उठाने में 4 वर्ष की देरी को घातक माना गया, *नेदुंगडी बैंक लिमिटेड बनाम के.पी. मुधवुनकुट्टी एवं अन्य* (उपरोक्त) एआईआर (2000) एससी 839 में 7 वर्ष की देरी को घातक माना गया तथा कामगारों को किसी भी राहत के लिए अयोग्य घोषित किया गया। *रतन चंद्र सामंत एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य* (उपरोक्त) (1993) एआईआर एससीडब्ल्यू 2214 में, यह माना गया कि नियोक्ता द्वारा छंटनी किया गया एक अस्थायी श्रमिक, विलंब के कारण स्वयं को कानूनी रूप से उपलब्ध उपचार से वंचित कर लेता है। समय बीतने के परिणामस्वरूप उपचार और अधिकार दोनों ही समाप्त हो जाते हैं। यदि विलंब के परिणामस्वरूप न्यायनिर्णयन से संबंधित महत्वपूर्ण साक्ष्य नष्ट हो जाते हैं और अनुपलब्ध हो जाते हैं, तो यह विलंब निश्चित रूप से घातक होगा। हालाँकि, हमें नहीं लगता कि इस मामले में हुई देरी इतनी दोषपूर्ण है कि अपीलकर्ताओं को किसी भी राहत का हक नहीं है। हालाँकि उच्च न्यायालय ने यह राय दी है कि न्यायाधिकरण के समक्ष विवाद उठाने में 7 से 9 साल की देरी हुई थी, लेकिन हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय का यह निर्णय तथ्यात्मक रूप से सही नहीं है। अपीलकर्ताओं की नौकरी 1985-86 या 1986-87 में किसी समय समाप्त हो गई थी। *दैनिक दर पर आकस्मिक कर्मचारी पी एंड टी विभाग बनाम भारत संघ*, (उपरोक्त) एआईआर (1987) एससी 2342 के मामले में

दिए गए निर्णय के अनुसार, विभाग आकस्मिक श्रमिकों को समायोजित करने के लिए एक योजना तैयार कर रहा था और अपीलकर्ताओं को इसके परिणाम की प्रतीक्षा करने का अधिकार था। 16-1-1990 को उन्हें योजना में शामिल करने से मना कर दिया गया। 28-12-1990 को उन्होंने औद्योगिक विवाद अधिनियम के तहत कार्यवाही शुरू की, जिसके बाद सुलह की कार्यवाही हुई और फिर विवाद को औद्योगिक न्यायाधिकरण सह-श्रम न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया गया। हमें नहीं लगता कि अपीलकर्ताओं को देरी के आधार पर अयोग्य ठहराया जाना चाहिए।

ऐसा प्रतीत होता है कि न्यायाधिकरण और उच्च न्यायालय ने ऊपर उल्लिखित कानूनी स्थिति की पृष्ठभूमि में तथ्यात्मक स्थिति पर विचार नहीं किया। बेशक, जिस समय मामले का निर्णय हुआ, उस समय *एयर इंडिया* का मामला (उपरोक्त) ही प्रभावी था। लेकिन, *स्टील अथॉरिटी* मामले (उपरोक्त) में संविधान पीठ के निर्णय को देखते हुए, इस मामले की उच्च न्यायालय द्वारा पुनः जाँच की जानी आवश्यक है। यद्यपि श्री उपाध्याय ने यह तर्क दिया कि अपीलकर्ता द्वारा छद्मवेश धारण करने के बारे में एक निष्कर्ष है, परंतु इस संबंध में न्यायाधिकरण और/या उच्च न्यायालय द्वारा कोई निश्चित निष्कर्ष नहीं निकाला गया है। तथ्यात्मक स्थिति की जाँच के बिना इस न्यायालय की कुछ टिप्पणियों का मात्र उल्लेख पर्याप्त नहीं होगा। इसके अतिरिक्त, जिन दावेदारों का पक्ष संघ द्वारा लिया जा रहा था, उनके नामों को छोड़ देने के प्रभाव पर उच्च न्यायालय ने उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया है। कथित समझौते के संबंध में भी यही स्थिति है। इन विशिष्ट परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के लिए इस मामले पर पुनर्विचार करना उचित होगा। तदनुसार, मामला उच्च न्यायालय को वापस भेजा जाता है ताकि विद्वान एकल न्यायाधीश उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए मामले पर नए सिरे से विचार कर सकें और अपीलकर्ता द्वारा उठाए गए मुद्दों के

पृष्ठभूमि तथ्यों पर उनकी प्रयोज्यता पर विचार कर सकें। चूँकि मामला लंबे समय से लंबित है, अतः उच्च न्यायालय के विद्वान मुख्य न्यायाधीश से अनुरोध है कि वे इस मामले को एक विद्वान एकल न्यायाधीश को आवंटित करें, जो मामले को विद्वान मुख्य न्यायाधीश द्वारा आवंटित किए जाने की तिथि से छह महीने की अवधि के भीतर इस मामले का नए सिरे से निपटारा करने का प्रयास करेंगे।

अपील को उपरोक्त सीमा तक बिना किसी लागत के आदेश के स्वीकार किया जाता है।

एन.जे.

अपीलें स्वीकृत की गईं।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।